चलो पाठशाला : चलो सिनेमा

भाग - १

डॉ. शुद्धात्मप्रभा टड़ैया

प्रथम दो संस्करण : 5000
2 अगस्त 2004 से अद्यतन
तृतीय संस्करण : 3000
17 मई 2008

लेखिका :
©विद्वत्रत्न डॉ. शुद्धात्मप्रभा टड़ैया
बी. ए. ऑनर्स (स्वर्णपदक प्राप्त)
एम. ए., पी. एच. डी.

डिजाईनिंग एवं कम्प्यूटर ग्राफिक्स
कु. आराध्य टड़ैया, मुंबई

मुद्रण व्यवस्था :
अखिल बंसल, 9929655786

प्रकाशक :
पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर
A-4, बापू नगर, जयपुर-302015 (भारत)
फोन : 0141-2705581, 2707458
फैक्स : 2704127
Email : ptstjaipur@yahoo.com
मुद्रक :
Print 'O' Land
बाईस गोदाम, जयपुर

मूल्य : 8/-

प्रकाशकीय

मानव मन को सर्वाधिक प्रभावित करने वाली विधाओं में एक विधा नाटक है। बाल मन को लुभाने में और उनके तीव्र विकास में बालकों द्वारा बोली जाने वाली भाषा ही सुलभ साधन है। अतः लेखिका डा. (श्रीमती) शुद्धात्मप्रभा टड़ैया ने तत्त्वज्ञान के कठिन विषय को बोधगम्य बनाने हेतु इस नाटक का सफलता पूर्वक लेखन किया है। जिसमें मनोवैज्ञानिक तरीके से भावनाओं का सुन्दर चित्रण किया है। अतः हम उनके आभारी हैं।

ब्र. यशपाल जैन
प्रकाशन मंत्री
पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर

क्या / कहाँ

१)	लिविंग थिंग	1
२)	चलते - चलते	3
३)	क्या करें हम?	4
४)	बात करते - करते	5
५)	परिवर्तन	6
६)	लौटते - लौटते	6
७)	जब जागो तभी सबेरा	7
८)	जागते - जागते	8
९)	सुख क्या?	9
१०)	सोचते - सोचते	9
११)	टॉन्टिंग	10
१२)	हँसते - हँसते	10
१३)	ललक	11
१४)	कहते - कहते	12
१५)	करे जैसा भरे वैसा	13
१६)	चिढ़ते - चिढ़ते	14
१७)	अच्छा मित्र कौन?	15
१८)	छपते - छपते	16

1
लिविंग थिंग

पात्र : (१) गरम, (२) करम, (३) नरम, (४) मरम

पात्रपरिचय :

१) **गरम :** जिद्दी गरम गुस्सैल है। बात - बात में लड़ना - झगड़ना, मारना - पीटना उसकी आदत है। गुस्से में कभी - कभी दूसरों के साथ - साथ स्वयं को भी कष्ट दे देता है। अपनी हार वह बर्दाश्त नहीं कर सकता। चेहरे से भोला - भाला गोरा सा यह गरम बुद्धिमान है, पर यह अपनी बुद्धि का उपयोग शैतानियों में ही करता है। पढ़ने - लिखने में विशेष मन नहीं लगता उसका। अपने स्वभाव के अनुसार लाल कपड़े पहनना ही वह पसंद करता है।

२) **करम :** हरे कपड़े वाला करम मौनी बाबा है। सबके द्वारा किए हुए जुर्मों को अपने खाते में डलवाने को ही यह अपनी बहादुरी मानता है। अतः दूसरे लोग गलती कर जब इसके नाम पर मढ़ देते हैं तब भी यह प्रतिकार नहीं करता। शैतानी इसके चेहरे पर झलकती है। अतः यह गलती करे या ना करे पर डांट इसे ही पड़ती है। गरम तो अपने भोले चेहरे के कारण हमेशा बच जाता है।

३) **नरम :** नीले कपड़ों वाला नरम 'यथा नाम तथा गुण है' अर्थात सीधा साधा। दोस्तों ने जैसा कहा वैसा मान लिया, अतः दोस्तों से झगड़े का सवाल ही नहीं उठता। माता-पिता का आज्ञाकारी यह सभी का दुलारा है।

४) **मरम :** पीले कपड़ों वाला मरम कोई भी काम सोचसमझकर ही करता है। अपने काम अधिकतर प्यार से ही करवाता है, पर जरूरत पड़ी तो आँखें भी तरेरता है। यह नरम सा मुलायम और गरम सा कठोर नहीं; यह मध्यमार्गी है। अतः अन्य दोस्तों में झगड़ा होने पर सुलह कराने का काम यही करता है। यह करम और नरम पर नाइंसाफी नही होने देता तथा गरम को भी समय - समय पर गलत काम करने से रोकता रहता है। गंभीर चेहरे वाले इसके विवेक पर क्रोध कभी हावी नहीं हो पाता।

(चारों गार्डन में खेल रहे हैं। तभी गरम आम के पेड़ पर चढ़ जाता है, और कभी उसके फल तोड़ता है, तो कभी पत्तियाँ। थोड़ी ही देर में अकेले पेड़ पर चढ़े - चढ़े वह बोर हो जाता है। अतः अपने दोस्तों को आवाज देकर बुलाता है - करम, मरम, नरम! इधर आओ! देखो पेड़ पर कितना मज़ा आ रहा है। (तीनों आते हैं।)

गरम : चलो, सब ऊपर आ जाओ। जो सबसे अधिक डालियाँ, पत्तियाँ तोड़ेगा; वह जीतेगा। (नरम और करम फटाफट पेड़ पर चढ़कर पत्तियाँ तोड़ते है। तभी मरम सभी को रोकता हुआ कहता है -)

मरम : रुको! रुको!! फालतू में क्यों पेड़ को दर्द देते हो। उसे भी तकलीफ होती है। (तीनों बच्चे हँसने लगते हैं।)

गरम : (मजाक उड़ाते हुए कहता है) सुनो! भाई लोगों सुनो! आज की ताजा खबर सुनो!!! (आस पास खेल रहे सभी बच्चे आ जाते हैं।

गरम : हा! हा!! हा!!! मरम बड़ी मजेदार बात कह रहा है। पेड़ों को दर्द होता है। हा! हा!! हा!!! अरे मेरे दादाजी! बताओ, बताओ और बताओ। पेड़ों को क्या-क्या होता है? उन्हें दर्द होता है, तो वे रोते भी

होंगे, हँसते भी होंगे, हम-तुम जैसे चलते भी होंगे? एक तरह से हम-तुम जैसे ज्ञानवान जीव ही हो गए ये पेड़। चलो भाई ! सब लाईन में खड़े हो जाओ और दुनिया के इस ज्ञानवान जीव को नमस्कार करो। साष्टांग दंडवत करो। (गरम की यह बात सुनकर सब बच्चे हँसने लगते हैं। कुछ बच्चे तो नमस्कार भी करने लगते हैं।)

मरम : दोस्त ! मजाक उड़ाने के लिए ही सही, पर तूने सत्य बात कही है। हाँ, पेड़ भी हम-तुम जैसे ज्ञानस्वभावी जीव हैं, पर अंतर इतना है कि हमारे तो पांच इंद्रियां होती हैं और पेड़ के एक - इंद्रिय ही होती है।

नरम : यह इंद्रियाँ क्या होती हैं?

मरम : शरीर, जीभ, नाक, आँख और कान - यही पांच इंद्रियाँ हैं।
पेड़ के मात्र शरीर है, इसलिए उसे एकेन्द्रिय जीव कहते हैं।

सिद्धि : वह रोता तो है नहीं, फिर जीव कैसे है?

मरम : अच्छा तो बताओ - मक्खी, मच्छर, इल्ली आदि जीव है या नहीं?

सभी : (एक साथ) हैं।

मरम : तो क्या वे रोते हैं?

सभी : (एक साथ) नहीं।

करम : हाँ, वे रोते हैं; पर हमें सुनाई नहीं देता क्योंकि वे हमारे जैसे चिल्लाकर नहीं रोते, तकलीफ तो होती है न उन्हें ! ज्ञान तो उन्हें है न !!

मरम : सही कहा, करम ने ! मात्र रोने - हँसने से कोई जीव नहीं होता। जिसमे ज्ञान हो, जो जानता हो; वही जीव है।

गरम : हैं, तो क्या पेड़ में ज्ञान है?

नरम : हाँ, होता है। मैंने डिस्कवरी चैनल में देखा था - एक पेड़ ऐसा होता है जिसके पास यदि कोई जाए तो वह उसे पकड़ लेता है।

आराधना : हाँ ! हाँ !! मैंने भी देखा था, एक पेड़ को छू दिया तो वह मुरझा गया।

करम : अरे हाँ ! स्कूल में पढ़ा तो था कि पेड़ लिविंग थिंग है; पर कभी सोचा ही नहीं कि लिविंग थिंग का मतलब हमारे - तुम्हारे जैसा जीव है।

मरम : देखो ! हाथ - पैर कटने पर जैसी तकलीफ हमें होती है, वैसी ही तकलीफ डालियाँ पत्तियाँ तोड़ने पर पेड़ों को भी होती है। अतः हम ऐसे खेल क्यों खेले जिसमें किसी को तकलीफ हो।

सिद्धि : अरे ! कल मैंने एक पिक्चर देखी। उसमें बताया कि जब पेड़ को उखाड़ते हैं तो वे बहुत रोते हैं, चीखते - चिल्लाते हैं। यदि हमें उनकी आवाज सुनाई दे जाए तो हम बेहोश हो जाएँ।

सर्वज्ञ : हाँ, मैंने भी टी.वी. न्यूज में देखा था की अभी - अभी कुछ लोगों ने फूलों के गाने की आवाज रेकॉर्ड की। वे गाते हैं कि नहीं यह तो जाने दीजिए पर इससे यह सिद्ध हो ही जाता है कि वे अपनी - अपनी भाषा में बात करते हैं। अपनी प्रसन्नता और दुःख गाने और रोने के रूप में अपनी शैली में व्यक्त कर अपनी भावना अपने साथियों तक पहुँचाते हैं।

नरम : तो फिर यह सब तोड़ने पर बहुत पाप होता होगा। ओफ्फ ! हम लोग व्यर्थ में ही कितना पाप करते रहते हैं ! न बाबा न। अब तो मैं फूल - पत्तियाँ कभी नहीं तोडूँगा।

सभी : (एक साथ) हम भी नहीं तोड़ेंगे।

करम : मरम तुमने यह सब बात कहाँ से सीखी? स्कूल में तो यह सब नहीं पढ़ाया जाता।

सिद्धि : (गर्व से) मुझे तो मेरी दादी जैन नर्सरी, जैन के.जी. घर पर ही पढ़ातीं हैं। उन्हीं से सीखा है मैंने यह सब। अभी मैं के.जी. भाग ३ पढ़ रही हूँ।

स्वस्ति : कहाँ मिलेंगी ये पुस्तकें?

सिद्धि : डोन्ट वरी यार ! परसों तेरी बर्थ डे है न ! मैं तुझे गिफ्ट दे दूँगी।

करम : मरम ! क्या तुझे भी तेरी दादी सिखाती हैं।

मरम : नहीं, मेरी दादी रात में जब प्रवचन सुनने जातीं हैं, तो मैं भी उनके साथ मंदिर जाता हूँ। वहीं पर प्रतिदिन बच्चों की पाठशाला चलती है, जहाँ पंडितजी से मैं ये सब सीखा हूँ।

नरम : कितने बजे लगती है पाठशाला?

करम : कहाँ लगती है पाठशाला? एड्रेस देना?

गरम : हाँ, हाँ बता कल से हम सब भी पाठशाला में आएँगे।

मरम : कल मेरे साथ चलना।

(सभी चले जाते हैं।)

2 चलते – चलते

(दूसरे दिन पाठशाला जाते हुए रास्ते में।)

अपूर्व : मैंने तो अभी २-४ दिन से ही पाठशाला जाना शुरु किया है। वहाँ तो गुरुजी ने बताया था कि - पानी, आग, पृथ्वी, वायु सभी जीव हैं।

मरम : हाँ, हाँ ! वे भी पेड़ के समान एकेन्द्रिय जीव हैं।

गरम : विज्ञान में तो कहीं ऐसा नहीं कहा।

मरम : विज्ञान ने अभी उस संदर्भ में शोध नहीं की क्योंकि वैज्ञानिकों का ध्यान अभी इस ओर नहीं गया। ऐसी बहुत सी बातें जैन दर्शन में है जिन पर वैज्ञानिकों ने अभी विचार ही नहीं किया।

नरम : एक काम कर तूँ बड़ा होकर इन पर शोध कर। तूँ भी एक महान वैज्ञानिक कहलाएगा।

करम : फिर हम कहेंगे एक महान वैज्ञानिक अपूर्व हमारा बचपन का दोस्त है, जिसने अपूर्व खोज की है।

मरम : अपूर्व ही क्यों? हम सबको भी यही करना चाहिए। जैन दर्शन में ऐसी बहुत सी वैज्ञानिक बातें हैं।

नरभ : कौन - कौन सी बातें हैं, जरा बताओ?

मरम : गुरुजी, सब बतायेंगे। वे ऐसी बहुत अच्छी बातें बताते हैं। अभी हम पाठशाला में पहुँचने वाले हैं। देखो वो रही पाठशाला। आओ **चलें पाठशाला।**

3
क्या करें हम?

(प्रवचन हॉल में पंडित जी प्रवचन करने बैठे हैं। लगभग ५० से ८० के उम्र के कुछ स्त्री - पुरुष नीचे बैठे हैं।

पंडितजी : आज हम कृत, कारित और अनुमोदना की चर्चा करेंगे। कोई भी बुरा काम स्वयं करने में जितना दोष है, उतना ही दोष किसी दूसरे से करवाने में या अपनी सहमति होने में भी है। जैसे - रात में स्वयं खाएँ, अन्य को खिलाएँ या खाते हुए की पैरवी करें - सभी में समान दोष है।

कामना : (बुजुर्ग महिला) पंडितजी हम तो रात में ना खाते हैं, ना खिलाते हैं। अपने बहु-बेटे से रोज दिन में खाने को कहते है। क्या करें बेटा सुनता ही नहीं। बहु से कहते हैं कि कम - से - कम अपने बच्चों को तो दिन में खाना खिलाए। पर कोई हमारी सुनता ही नहीं। क्यों? आखिर क्यों?? अब क्या करें हम? क्या गलती है हमारी?

पंडितजी : देखो ! हम से मूल में ही भूल हो जाती है। हम बचपन से बच्चों में संस्कार नहीं देते। जब बीज ही नीम के होंगे तो आम का पेड़ कहाँ से होगा? यदि बच्चों में छोटे से ही धार्मिक संस्कार दें तो आज यह प्रश्न खड़ा ही नहीं होता। अब तुम्हारे बेटे को तुम कुछ नहीं सिखा सकती? पर हाँ तुम्हारे पोते - पोती सीख सकते हैं। क्या तुम उन्हें पाठशाला में लाती हो?

कामना : नहीं ! उनको समय ही नहीं है। दिनभर स्कूल - ट्युशन और फिर क्लासेस। बस शाम का ही थोड़ा - बहुत समय मिलता है, तो खेलने चले जाते है। पाठशाला में आएँगे तो खेलेंगे कब? आखिर बच्चों को थोड़ा एन्जॉयमेंट तो चाहिए ही।

पंडितजी : अच्छा एक काम करो। ये जो तुम्हारे बगल में भक्ति बहन जी बैठी हैं, उनका पोता विवेक है। तुम अपने पोते की दोस्ती उससे करा दो। शाम के समय वह उसके साथ खेलेगा, तो सब ठीक हो जाएगा।

कामना : ठीक है मैं आज ही ज्ञान की दोस्ती विवेक से करा देती हूँ।
(वे उठकर चली जातीं हैं, उनके जाने पर .....)

भक्ति : पंडितजी ! आपने उन्हें समझाया क्यों नहीं? मेरे पोते विवेक से दोस्ती करने से क्या होगा?

पंडितजी : देखो ! वे आज कुछ सुनने - समझने और करने के मूड़ में थीं हीं नहीं। वे चाहती थीं कि मैं उनके घर जाऊँ और उनके बेटे - बहु को रात्रि भोजन त्याग करने को कहूँ। पर उपजाऊ भूमि में खाद - पानी डालने पर बीज फलदायी होता है, बंजर में नहीं। विवेक से दोस्ती होने पर ज्ञान उसके साथ धीरे - धीरे पाठशाला आने लगेगा और कुछ दिन पाठशाला में पढ़ने पर दोस्तों के साथ सहज में ही वह सदाचारी हो जाएगा। सत्संगति का असर पड़ता ही है। हमें - तुम्हें कुछ करने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी।

धर्मचन्द : (बुजुर्ग सज्जन) और उनके माता - पिता। उन्हें तो समझा सकते थे आप !

पंडितजी : जो मंदिर व प्रवचन में नहीं आते, उन्हें जाकर समझाने से भी कोई लाभ न होगा। हाँ उनके बच्चों द्वारा जरूर हम उनमें परिवर्तन करने का प्रयास करेंगें।

कर्मचन्द : कैसे?

पंडितजी : सब बातें कहने की नहीं होतीं। आप देखते जाओ। एक माह बाद उन माँ जी के बेटा - बहु तुम लोंगो के साथ प्रवचन सुन रहे होंगे। आज समय चर्चा में ही समाप्त हो गया। हम सभी सत्संग द्वारा आत्मकल्याण करें इसी भावना से विराम लेता हूँ। (सभी चले जाते हैं।)

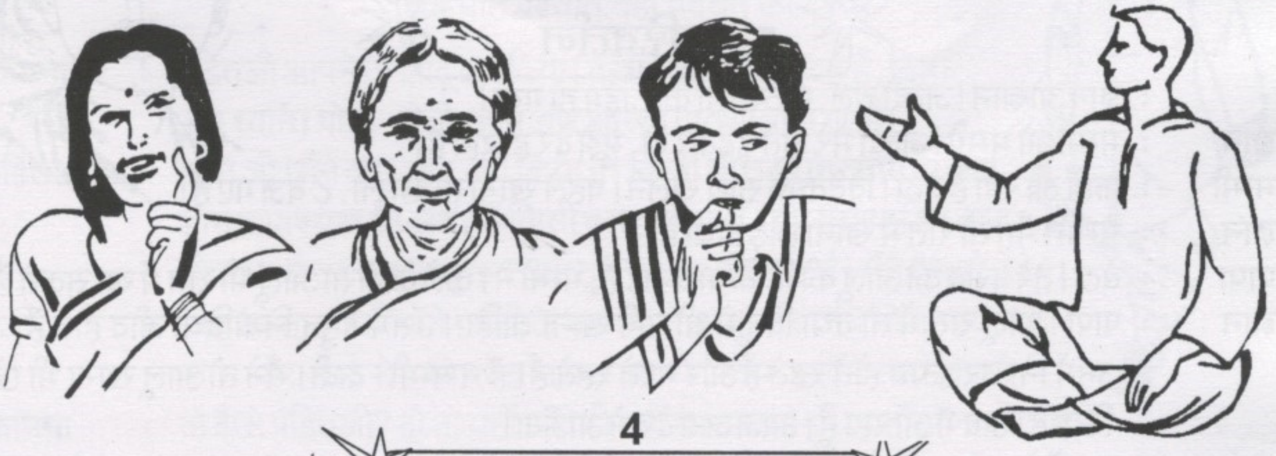

4
बात करते - करते

(कामना घर जाते - जाते अपने पति से कहती है-)

कामना : पंडितजी ने कितनी सही बातें कही हैं। मुझे याद आ रहा है। जब दिव्य छोटा था तब मैं मंदिर जाती तो दिव्य को सासु माँ के पास छोड़ जाती थी, जब वे मंदिर जातीं थीं तो मेरे पास। घूमने - फिरने में इससे उलटा होता था, मैं भी घुमाने ले जाती और सासु माँ भी। यही कारण है कि आज दिव्य मंदिर जाना ही नहीं चाहता। बहु उसमें क्या करें? गल्ती मेरी ही थी।

धीरज : हमने तब भी गल्ती की और आज भी कर रहे हैं। अपने पोते - पोतियों को पाठशाला कहाँ भेज रहे हैं? संस्कार तो बचपन में ही दिए जाते हैं।

कामना : हमने लौकिक संस्कार तो दिए, धार्मिक संस्कार नहीं दिए। जिसकी हमने प्रेरणा दी उसमें वे अव्वल रहे। पाठशाला भेजना हमारी दैनिक क्रिया में तो शामिल था ही नहीं और देवदर्शन को भी हमने अंतिम स्थान दिया हुआ था।

धीरज : सही कहा तुमने। मंदिर जाने का सोचते रोज थे पर जा नहीं पाते थे क्योंकि कभी मेहमान आ जाते, तो कभी घूमने जाना होता था; कभी रामायण - महाभारत देखते थे तो कभी आराम का मूड़ हो जाता था। इसप्रकार बस रविवार को ही मंदिर जा पाते थे।

कामना : बच्चे जो देखते हैं उससे एक कदम आगे चलते हैं। हमारे माता - पिता देवदर्शन के बिना खाना नहीं खाते थे। हम मात्र छुट्टी के दिन सुविधानुसार देवदर्शन करते रहे। हमारे बच्चे पर्युषण में ही मंदिर जाते हैं। भगवान जाने आगे की पीढ़ी का क्या हाल होगा?

धीरज : हम तब भी नही समझते थे, अब जब तक बात समझ में आई तब तक बहुत देर हो चुकी है। सदाचार के संस्कार और मन की शांति के लिए बच्चों को पाठशाला भेजना बहुत जरूरी है।

कामना : अभी भी देर नहीं हुई। पंडितजी के बातों में विश्वास की झलक थी। बस ज्ञान की दोस्ती विवेक से करा दें तो कुछ - न - कुछ रास्ता जरूर निकलेगा और हमारे भी बच्चे कहेंगे - **चलो पाठशाला।**

5 परिवर्तन

: ज्ञान ओ ज्ञान ! जल्दी चल, पाठशाला का टाईम हो गया।

ज्ञान : मम्मी ओ मम्मी ! जल्दी मेरे जूते ढूँढकर दो, मुझे देर हो रही है।

मम्मी : कहाँ जा रहा है बेटा ! विवेक के साथ खेलने। पहले खाना तो खा लो, ८ बज गए हैं।

ज्ञान : मम्मी ! मैंने तो रात में खाना छोड़ दिया है।

पापा : बेटा ! तेरे पसंद की आलू की टिकिया बनाई है, मम्मी ने। केले के जैसा आलू भी रात में खा सकते हैं।

ज्ञान : पापा ! आलू रात में तो क्या दिन में भी नहीं खाना चाहिए। उसमें बहुत निगोदिया जीव होते हैं, जो उनमें निरंतर उत्पन्न होते रहते हैं और मरते रहते हैं। हैं न मम्मी - दादी। मैंने तो आलू खाना भी छोड़ दिया है। अब मैं जा रहा हूँ। आज जरा देर से आऊँगा।

पापा : रात में देर तक नहीं खेलते, जल्दी आना।

ज्ञान : नहीं पापा मैं खेलने नहीं जैन नगर में पाठशाला में पढ़ने जा रहा हूँ। आज वहाँ हमारा नाटक है अतः लेट हो जाऊँगा। पापा - मम्मी आप भी आना मेरा प्रोग्राम देखने।

विवेक : (नीचे से) जल्दी चल। वहाँ पाठशाला शुरू हो जाएगी।
(ज्ञान नीचे आता है और दोनों जल्दी-जल्दी चले जाते हैं।)

पापा : देखो ! तुम ज्ञान का ध्यान रखो। विवेक के साथ बिगड़ रहा है। ये उल्टी-सीधी बात सीख जाएगा, तो परेशानी होगी। पार्टियों में जाना बंद हो जाएगा।

मम्मी : विवेक तो बहुत समझदार लड़का है। उसमें कोई दुर्गुण नहीं हैं। थोड़ा धार्मिक है।

पापा : फिर भी उसकी बातें मुझे कुछ जम नहीं रही थीं। चलो चलकर देखते हैं। कहाँ जाता है? क्या करता है? आज कुछ नाटक की बात भी कर रहा था। देखें क्या रोल है उसका? (दोनों चले जातें हैं।)

6 लौटते – लौटते

(नाटक देखकर वापस लौटते हुए आस्था, ज्ञान और उसकी मम्मी पापा बातचीत करते हैं।)

आस्था : मम्मी ! बरसात में तो बात करने में भी मुंह में बहुत-से कीड़े चले जाते हैं, तो फिर खाना बनाने में मरते भी होंगे।

मम्मी : हाँ, खाना बनाने में परेशानी तो होती ही है। डा. भी सोने के तीन - चार घंटे पहले खाना खाने को कहते हैं।

आस्था : फिर हम क्यों रात में बनाते और खाते हैं।

पापा : बेटा ! कल से हम सभी रात में खाना नहीं खाएँगे, आलू भी नहीं खाएँगे। ज्ञान ! तुम्हारा नाटक बहुत अच्छा था, बड़े अच्छे वैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत किया गया था। किसने लिखा था, जरा उनसे मिलाना; चर्चा करेंगे।

ज्ञान : पापा ! दादा - दादी जिनके प्रवचन सुनने जाते हैं वे पंडितजी ही ये सब बातें बताते हैं। कल आप उनसे मिल लेना।

मम्मी - पापा : (दोनों एक साथ) हाँ, हाँ ! कल से हमारी भी शुरु होगी **पाठशाला।**

7

जब जागो तभी सबेरा

(एक माह पश्चात् वही प्रवचन का दृश्य)

कामना : पंडितजी आपने तो जादू कर दिया। देखो ! ये मेरे बेटा - बहु हैं, दिव्य और ध्वनि। पोता - पोती, ज्ञान और आस्था पाठशाला में गए हैं।

पंडितजी : बहन जी ! मैंने कुछ जादू नहीं किया है। **किसी भी वस्तु के त्याग के लिए ज्ञान आवश्यक है।** जब हमें किसी वस्तु की बुराई या परायापन का ज्ञान हो जाता है तब उस वस्तु का त्याग तुरंत सहज हो जाता है। मैंने तुम्हारे बेटे - बहु को तुम्हारे ही पोते - पोती के माध्यम से आलू और रात्रि भोजन त्याग से लाभ और खाने से हानि का ज्ञान मात्र कराया, त्याग उन्होंने स्वयं किया।

कामना : वो कैसे पंडितजी? वो तो यहाँ आते ही नहीं थे। आज उनका यहाँ आना ही जादू है।

पंडितजी : देखो ! विवेक के साथ खेलते - खेलते एक दिन ज्ञान भी पाठशाला में आया। तब मेरे कहने पर ज्ञान को एक नाटक में शामिल किया गया, जिसमें आलू और रात्रि भोजन त्याग की प्रेरणा दी गई थी। तुम्हारा पोता नाटक में प्रेक्टिस के लिए खेल छोड़कर प्रतिदिन पाठशाला में आने लगा। पाठशाला में प्रारंभ में आधा घंटा धार्मिक शिक्षा दी जाती है और आधुनिक शिक्षा पद्धति में लिखी गई पुस्तकें पढ़ाई जाती हैं तत्पश्चात नाटक की प्रेक्टिस कराई जाती है। बच्चे जल्दी सीखते और ग्रहण करते हैं। तुम्हारे पोते के साथ भी यही हुआ। अच्छे दोस्तों की संगति में गुरुजी की प्रेरणा से उसने भी आलू व रात्रि भोजन का त्याग कर दिया।

कामना : और मेरे बेटे - बहु?

पंडितजी : अपने बच्चों का मन रखने के लिए उनका प्रोग्राम देखने सभी माता - पिता आते हैं। वही तुम्हारे बेटे - बहु के साथ हुआ। बुद्धिमान तो वह हैं ही। जब नाटक के माध्यम से उन्हें सही ज्ञान हुआ तो उन्होंने तुरंत उनका त्याग कर दिया। तथा अधिक जानकरी हासिल करने वे आज आपके साथ यहाँ आए हैं।

कामना : मेरे कहने पर क्यों नहीं आए?

पंडितजी : देखो ! प्रायः **दुनिया कहने से कम आचरण से ही अधिक सीखती है।** आप याद करो जब आपका यह बेटा छोटा था तो क्या आप इसे प्रतिदिन देवदर्शन कराने साथ ले जाती थीं, पाठशाला भेजती थीं। नहीं न। न तब आप बेटे को लाती थीं न आज पोते - पोती को लाती हो। आपने अपने बेटे में जो संस्कार दिए उन्हें ही आदर्श मानकर वह अपने बेटे को भी वही संस्कार दे रहा है और धार्मिक क्रियाओं को बुढ़ापे में करने की क्रिया माने बैठा था।

दिव्य : पंडितजी ! धर्म तो बुढ़ापे में ही किया जाता है। अभी से हम धर्म - कर्म में उलझेंगे तो घर - गृहस्थी कैसे चलेगी?

पंडितजी : नहीं बेटा ! धर्म करने की कोई उम्र निश्चित नहीं होती। **जब जागो तभी सबेरा।** धर्म तो अत्यंत जाग्रत अवस्था में करने की चीज है। जब हमारी पांचों इंद्रियाँ शिथिल हो जाएँगी, शरीर अनेक

रोगों से घिर जाएगा, स्मृति कमजोर पड़ जाएगी; तब कैसे सीखेंगे हम धर्म की बातें? कैसे समझेंगे तत्त्व? जहाँ तक गृहस्थी चलने की बात है, तो वह कैसे चलेगी?

ध्वनि : कुछ तो बताइए।

पंडितजी : घर - गृहस्थी चलाने से तुम्हारा मतलब पैसा कमाने से है?

दिव्य : हाँ जी।

पंडितजी : बेटा! ये तो बताओ पैसा कैसे मिलता है?

दिव्य : मेहनत करने से।

पुनीत : नहीं पंडितजी पूर्व पुण्य से।

दिव्य : मेहनत करते हैं तो ही पूर्व पुण्य काम आता है, सोते हुए को नहीं। सोते हुए का भाग्य भी सोता है।

पंडितजी : देखो कोई भी कार्य होने में पाँच समवाय होते हैं। जब पाँचों मिलते हैं, तो कार्य होता है। सारे कार्य अपने पूर्व निश्चित समय पर, निश्चित द्रव्य में निश्चित स्थान पर, निश्चित भावपूर्वक होता है।

ध्वनि : समवाय क्या होते हैं? इन्हें कैसे मिलाएँ? कार्य होने में और गृहस्थी चलने में क्या संबंध है?

पंडितजी : जो तुम पूँछ रही हो - यह सब एक दिन में समझ नहीं आएगा। प्रतिदिन आते रहोगे, तत्त्व समझोगे; तो सब धीरे-धीरे समझ में आ जाएगा। सभी धर्म के वास्तविक स्वरूप को समझकर, जीवन में अपनाकर परिपूर्ण सुखी हों - इसी भावना से विराम लेता हूँ।

8 जागते – जागते

(प्रवचन सुनकर घर वापस जाते हुए।)

ध्वनि : पंडितजी ने सही कहा। धर्म के मामले में हम सो ही रहे थे, हमारे माता - पिता से हम कुछ सीख ना सके, जागृत ना हो सके।

दिव्य : हाँ, हाँ! आज बच्चों ने हमारी आँखें खोल दीं। सोते - सोते तीस वर्ष निकल गए। अब कल से सिनेमा जाना बंद। पंडितजी ने सही कहा, **जब जागो तभी सबेरा।**

9 सुख क्या ?

माँ : बेटा, लब्धि ! जा, पाठशाला जा।

लब्धि : माँ, ये क्या सुबह स्कूल जाओ, शाम को पाठशाला। खेलेंगे कब? पाठशाला क्यों जाएँ?

माँ : बेटा ! पाठशाला में धर्म की पढ़ाई होती है।

लब्धि : धर्म पढ़ने से क्या होगा? स्कूल में भी तो धर्म पढ़ती हूँ। नैतिक शिक्षा में धर्म की बातें ही तो बताते हैं।

माँ : बेटा ! स्कूल की पढ़ाई व पाठशाला की पढ़ाई में बहुत अंतर है। जब जाओगी तो पता चलेगा। पाठशाला में सच्चा सुख प्राप्त करने की विधि बताई जाती है।

लब्धि : माँ ! आप भी कैसी बातें करती हैं? हम दुःखी कहाँ हैं? सब कुछ तो है हमारे पास। इतना बड़ा बंगला है, गाड़ी है, नौकर - चाकर हैं, आप और पापा मुझे डांटते भी नहीं हैं, मेरी सब फर्माइशों को पूरी करते हैं। सुखी ही तो हैं हम। अब और क्या जरूरत है? और क्या सुख है? जो पाठशाला में जाने से मिलेगा।

माँ : बेटा ! तेरी सब बातों का जबाब तो गुरुजी ही पाठशाला में देंगें। पर देख तुझे कभी पेट में दर्द होता है, कभी खांसी - जुखाम; कभी भूख सताती है, तो कभी प्यास - ये सब दुःख नहीं हैं क्या?

लब्धि : माँ ! ये तो सबको ही होते हैं। भूख लगती है तो हम खाना खा लेते हैं। बीमार होते हैं तो दवाई खा लेते हैं - ऐसा कौन है जिसे ये सब न होते हों। इनसे छुटकारा तो संभव ही नहीं है। शरीर के साथ तो ये सब लगा ही रहता है।

माँ : नहीं, बेटा ! ऐसी बात नहीं है। इन सबसे छुटकारा संभव है। भगवान को भूख - प्यास नहीं लगती, वे बीमार भी नहीं होते। वे तो मात्र आत्मा में लीन रहते हैं।

लब्धि : माँ भूख - प्यास ही न लगेगी तो फिर खाने - पीने का क्या मजा? अच्छा खाना - पीना, अच्छा पहनना - ओढ़ना, मस्ती करना - यही तो सुख है। इसीलिए तो हम स्कूल जाते हैं, पापा काम करते हैं। सुबह से शाम तक हम सभी इन्हीं सुखों को पाने की कोशिश करते रहते हैं।

माँ : नहीं बेटा ! ये सच्चा सुख नहीं।

लब्धि : तो फिर सच्चा सुख क्या है?

माँ : सच्चा सुख क्या है? सच्चे सुखी कौन हैं? सच्चा सुख कैसे प्राप्त किया जा सकता है? आदि बातें ही तो पाठशाला में गुरुजी बताते हैं।

लब्धि : (टालने के लिए) अच्छा तो माँ मैं टेस्ट समाप्त होने पर पाठशाला जाऊँगी। (खेलने चली जाती है।)

10 सोचते – सोचते

माँ : (मन में सोचते हुए) आज मैं बहुत खुश हूँ। आखिर में मेरी प्रतिदिन की कोशिश रंग लाई। पापा की दुलारी ने आज कह ही दिया - मम्मी ! मैं **जाऊँगी पाठशाला।**

11 टॉन्टिग

(दूसरे दिन स्कूल में लब्धि के सहपाठी चिढ़ाते हुए कहते हैं)

किशमिश : लल्लू में है, कल्लू में नही। अब्धि में हैं, अवधि में नहीं। बताओ वो कौन है?
मधु : नहीं जानते, अरे वो आ रही है लब्धि। लब्धि नहीं, लल्लू लब्धि।
नीबूँ : वाह ! वाह !! क्या नाम है लब्धि। मतलब जानती हो अपने नाम का। लब्धि होती किस काम की?
काजु : देखो मैं हूँ काजू। जो मुझे खाता देखो उसका बाजू।
पिस्ता : मैं हूँ पिस्ता। मुझे पाने में गरीबों की हालत खस्ता।
किशमिश : मैं हूँ किशमिश। कोई न करना चाहे मुझे मिस।
मधु : मधु हूँ मैं, फूलों का रस हूँ मैं।
रेखा : मैं हूँ रेखा, सिनेमा में तुमने मुझे देखा।
सभी : (एक साथ) बताओ ! बताओ !! तुम कौन हो?
(लब्धि मुँह छुपाती है और इधर - उधर देखती है।)

नीबूँ : नही जानती, चलो बताते हैं हम तुम्हें तुम्हारे नाम का मतलब।
किशमिश : जैसे बैर को उबालकर बनाई जाती लुगदी, वैसे तुम हो लल्लू लब्धि।
मधु : लल्लू का मतलब तो जानती ही होगी, या वो भी बताएँ हम।
हमें सबका मतलब पता, हम नहीं किसी से कम।
पिस्ता : अरे ! इसकी बात छोड़ो। इसके सभी भाई बहनों के नाम हैं ऊटपटांग।
काजू : एक है क्षयोपशम, जिसके साथ हमेशा गम। दूजी है विशुद्धि, नहीं जिसके पास शुद्धि।
किशमिश : तीजी है देशना, जिसके पास अक्ल का लेश ना। चौथा है प्रायोग्य, जो नहीं किसी के योग्य।
नीबूँ : पाँचवा है करण, नहीं जिसकी कोई शरण।
काजू : वाह ! वाह !! क्या नाम है सभी भाई - बहनों के।
पिस्ता : लगता है चिड़िया घर से उठकर आए हैं।
ज्ञाता : देखो किसी का नाम कुछ भी हो। हमें उससे क्या? पर हमें उसपर कुछ भी कमेन्ट्स नहीं करना चाहिए। टॉन्टिग नहीं करना चाहिए।
रेखा : अरे ! वो चिढ़ती क्यों है? वो चिढ़ती है, तो हमें चिढ़ाने में मजा आता है।
ज्ञाता : फिर भी ....
पिस्ता : (बीच में ही बात काटकर) बस ! बस !! बहुत हो गया ज्ञाता। तुम ज्ञाता हो, ज्ञाता ही रहो। कमेन्ट्स मत करो। आता नहीं कुछ भी, बने फिरते हैं ज्ञाता। (सभी हँसते हैं और चले जाते हैं।)

12 हँसते – हँसते

(घर पर आकर)

काजू : मम्मी आज हमने लब्धि को बहुत चिढ़ाया, बहुत मजा आया।
मम्मी : दूसरों को दुःख में देखकर लोगो को दया आती है, तुम्हें मजा आया। एक बार विचार करो - कल कोई तुम्हारे साथ ऐसा करे तो तुम्हें कैसा लगेगा? जैसा व्यवहार तुम अपने साथ चाहते हो, वैसा ही तुम्हें दूसरों के साथ करना चाहिए। कल जाकर उनसे माफी माँग लेना।
सभी : ठीक है मम्मी ! (सभी चले जाते हैं।)

13 ललक

(घर का दृश्य, लब्धि घंटी बजाती है, माँ दरवाजा खोलती है।)

लब्धि : (पैर पटकते हुए) अंदर जाकर बैग, बोतल फेंकती है।

मम्मी : क्या बात है बेटा? क्या हो गया आज? क्या टीचर की डांट पड़ी है?

लब्धि : नहीं मम्मी ! कुछ नहीं।

मम्मी : फिर ....

लब्धि : स्कूल में सब चिढ़ाते हैं। कहते हैं - लल्लू में है .....

मम्मी : (बीच में से बात काटते हुए।) दुनिया की रीति यही है, चिढ़ने वालों को सब चिढ़ाते हैं। तुम यदि चिढ़ोगी ही नहीं, दुःखी होगी ही नहीं, तो वे एक-दो बार कहकर चुप हो जाएँगे।

लब्धि : पर ये बताओ मम्मी क्या मैं लल्लू हूँ? सब मुझे लल्लू लब्धि कहते हैं। लब्धि का मतलब क्या होता है? ऐसा ऊटपटांग नाम क्यों रखा मेरा?

मम्मी : तुम क्लास में टॉप करती हो, लल्लू कैसे हो सकती हो? तुम्हारा नाम ऊटपटांग नहीं बहुत सोच समझकर रखा है। लब्धि का गहरा मतलब है। अभी तुम्हे समझ नहीं आएगा। आज से पाठशाला जा रही हो। धीरे - धीरे गुरुजी सब सिखा देंगे।

लब्धि : नहीं, मम्मी नहीं; धीरे - धीरे नहीं। मुझे आज सीखना है, अभी सीखना है। आप ही तो हमेशा कहती रहती थीं कि लब्धि तुम ८ वर्ष की हो गई हो, अब सम्यग्दर्शन हो सकता है तुम्हें। जब सम्यग्दर्शन हो सकता है तो लब्धि क्यों नहीं समझ सकती? सब सीख सकती हूँ मैं।

मम्मी : अभी तक तुम पाठशाला तक तो गई नहीं। जैनदर्शन की A,B,C,D सीखी नहीं और M.A. की बात सीखना चाहती हो।

लब्धि : मम्मी ! आप चिंता न करो। कुछ दिनों में सब सीख जाऊंगी। आज तो आप मुझे मेरे नाम मतलब समझा दो, लब्धि के बारे में कुछ पहेलियाँ बता दो, ताकि अपने दोस्तों से पूँछकर उनके छक्के छुड़ा दूँ मैं।

मम्मी : देखो बेटा ! पहेलियाँ तो पाठशाला में गुरुजी ही सिखा सकते हैं। विस्तार से वे ही बताएँगे, पर लब्धि के बारे में तुम इतना समझ लो कि -

जीव की शक्ति विशेष हैं लब्धियाँ,
पाँच होती हैं लब्धियाँ।
जब पाँचो होती हमको,
तब सम्यक्त्व होता हमको।

लब्धि : सम्यग्दर्शन होने से पहले सभी को लब्धियाँ कम्पलसरी होती हैं क्या?

मम्मी : हाँ।

लब्धि : सम्यग्दर्शन प्राप्त करने से क्या होता है?

मम्मी : सम्यग्दर्शन सच्चा सुख प्राप्त करने का उपाय है। इसके बिना सच्चा सुख नहीं होता।

लब्धि : इसका मतलब यह हुआ कि लब्धियाँ परंपरा से सच्चे सुख का कारण हैं। मम्मी ! मेरे सभी भाई-बहनों के नामों का क्या मतलब है?

मम्मी : जो तुम्हारे भाई-बहनों के नाम हैं, वे ही लब्धि के पांच भेद हैं।

लब्धि : इसका मतलब यह हुआ कि क्षयोपशम, विशुद्धि, देशना, प्रायोग्य और करण - लब्धि के भेद होते हैं।

मम्मी : हाँ, सही समझा तुमने।

लब्धि : इनके बारे में भी कुछ बताइए ना।

मम्मी : देखो ! बेटा मुझे बहुत काम है, तुम अपने भाई - बहनों से पूँछो ना।
(लब्धि अपने भाई बहनों के पास जाकर उन्हें बुलाती है।)

लब्धि : भैय्या, दीदी इधर आओ। (सभी आते हैं।)
आपको अपने - अपने नामों का मतलब पता है?

सभी : हाँ, पता है। क्यों क्या बात है?

लब्धि : आज स्कूल में मुझे सभी चिढ़ा रहे थे और अपने सभी के नामों की मज़ाक उड़ा रहे थे। कल आप सब रिसेज में मेरे पास आना और अपने-अपने नामों का म्तलब बताना।

क्षयोपशम : लब्धि ! एक आइडिया है। (कान में खुस-फुस करते हैं।)

लब्धि : वाह ! भैय्या वाह !! तब तो मज़ा आ जाएगा।

प्रायोग्य : सुनो ! सब ध्यान से सुनो !! कल किसे क्या बोलना है? (कान में खुस-फुस) सब अपना - अपना पाठ अच्छे से तैयार करना।

लब्धि : भैय्या, पर सभी समय पर आ जाना, भूलना मत।

सभी : हाँ, हाँ ! आएँगे, जरूर आएँगे ,और उनकी बंशी भी बजाएँगे।

14 कहते – कहते

(लब्धि के जाने के बाद चारों भाई - बहन आपस में बातचीत करते हैं।)

देशना : मम्मी, इससे कहते - कहते परेशान हैं पर पापा की यह लाड़ली हमारे साथ पाठशाला आती ही नहीं है।

करण : देखो भैय्या शायद आपका आइडिया काम कर जाए और खेल - खेल में इसे रुचि हो जाए। बस हमारा काम रुचि जागृत करना है, फिर वह सीख तो जल्दी ही जाएगी।

क्षयोपशम : इसीलिए मैने उसका साथ दिया है, वरना मैं यह सब पसंद नहीं करता।

प्रायोग्य : हम सभी और बच्चों को भी पाठशाला लाने का प्रयास करेंगे।

देशना : हाँ, शायद सभी कहने लगें, **चलो पाठशाला।**

15

करे जैसा, भरे वैसा

(स्कूल में रिसेज में सब बच्चे पुनः मिलते हैं।)

(सभी चले जाते हैं।)

काजू : अरे आइए! आइए!! लब्धिजी!!! खाइए, खाइए लुगदी जी।

लब्धि : (बिना चिढ़े दृढ़ स्वर में) खाएँगे, खाएँगे लुगदी भी। पहले मिलिए हमारे भाईयों से भी।

पिस्ता : अच्छा तो आज छहों छक्के, हैं इकट्ठे। चलो मिलते हैं उनसे भी जम के।

लब्धि : भैय्या! ये हैं काजू, किशमिश, नीबूँ। वो हैं पिस्ता, मंदिरा, मधु।
इनको बड़ा नाज है अपने नामों पर, थू-थू करते ये हमारे नामों पर।

क्षयोपशम : (हाथ में काजू, किशमिश, पिस्ता और नीबूँ लिए हुए।)
ये हैं काजू, किशमिश, नीबूँ, पिस्ता;
आइए, आइए; खाइए, खाइए। (सब के खा लेने पर)

विशुद्धि : यदि ये सभी कल हमारे पेट से बाहर निकल जाएँगे,
तो क्या कहलाएँगे?
जानते हो तुम सभी या नाम लेकर बताएँ अभी।

देशना : कल की बात जाने दो, आज की बात करें हम।
अभी-अभी पेट से निकाल दें हम,
तो ये ही काजू, किशमिश क्या कहलाएँगे?
क्या ये भी बतायें हम? क्या जानते नहीं तुम?

प्रायोग्य : ये हैं मदिरा, सड़ा रस अंगुरों का।

करण : अजी और आप मधु। फूलों का रस नहीं हैं आप।
मधुमक्खियों का वमन हैं आप।
क्या यह नहीं पता आपको?
समझाएँ क्या विस्तार से आपको!

लब्धि : हाँ भैय्या बता दो, नहीं पता यह हमें।

करण : मुँह में रखकर ले जातीं वे फूलों का रस,
बाद में मुँह से निकालती वे फूलों का रस।
भोजन है उनका फूलों का रस, मधु है उनके अण्डों का रस।

लब्धि : भैय्या, बस, बस, बस! अपने नामों का मतलब बता दो बस!

क्षयोपशम : ज्ञान का उभार हूँ मैं।
तत्त्वज्ञान समझने की शक्ति मेरे कारण, गम दूर हो तुम्हारा मेरे कारण,
ऐसा मैं हूँ क्षयोपशम, नहीं जिसके पास कभी गम।

विशुद्धि : परिणाम शुद्ध नहीं जिनके, मैं पास नहीं उनके।

मोह मंद नहीं जिनका, मैं पास नहीं उनके।
यदि मैं पास नहीं तुम्हारे, तो तत्त्व समझ न सको तुम प्यारे।
निर्मल परिणामों का साथी हूँ, विशुद्धि कहलाती हूँ।

देशना : मात्र तत्त्व पढ़ने वालों के पास नहीं मैं, तत्त्व चिंतन करने वालों के साथ हूँ मैं।
सही निर्णय पर पहुंचने वालों के साथ मैं, देशना हूँ मैं।

लब्धि : (व्यंग से) अच्छा, अच्छा! समझ गई मैं।
जिनके पास अक्ल का लेश ना, उनके पास नहीं फटकती देशना।

प्रायोग्य : जिनके पाप कर्मों की सत्ता कम होती, नए कर्म बंध भी कम होते।
जिनके परिणाम विशुद्ध हैं होते, मैं उन्हीं के हूँ योग्य।
हर किसी के नहीं योग्य, मैं हूँ प्रायोग्य।

करण : सम्यग्दर्शन नहीं होता जिनको, सच्चा सुख नहीं मिलता उनको।
करण लब्धि नहीं होती जिनको, सम्यग्दर्शन नहीं होता उनको।

लब्धि : अच्छा भैय्या, इसका मतलब यह हुआ, करण के बिना नहीं सुख की शरण,
सबको आना पड़ेगा करण की शरण।
अब मेरे नाम का मतलब भी सुन लो,
मैं लब्धि हूँ, जीव की शक्ति विशेष हूँ।
क्षयोपशम, विशुद्धि, देशना, प्रायोग्य, और करण ये पांच रूप हैं मेरे।
सच्चा सुख मिलता उनको, जिनके पास होते पांचो रूप मेरे।

सभी : (साथ में) तुम लोगो ने क्या कहा? कुछ नहीं समझे हम।

करण : रात में आओ पाठशाला, सब समझोगे तुम।
(कोई कुछ नहीं बोलता है। काजू आदि सभी के मुँह नीचे लटक जाते हैं।)

ज्ञाता : भाई लोगों! आज मुँह लटकाकर क्यों खड़े हो! ये तो होना ही था क्योंकि
जो करे जैसा, वो भरे वैसा।

16 चिढ़ते – चिढ़ते

(सभी भाई - बहन वापस घर लौटते हुए -)

करण : (लब्धि से) तुम चिढ़ते - चिढ़ते धर्म की बातें सीख गई। मम्मी कितना कहती थीं - जाओ पाठशाला। पर तुम्हें कुछ समझ नहीं आता था। अब कल तुम अपने सभी दोस्तों को Thanks कहना।

लब्धि : क्यों भैय्या?

क्षयोपशम : उनके चिढ़ाने से ही तुम्हें लब्धि का मतलब जानने की ललक जगी है और लब्धि का मतलब तुम इतनी जल्दी समझ गईं।

लब्धि : अभी मैं पूरी तरह कहाँ समझ पाई हूँ। उस समय तो मैंने रट लिया था बस, पर अब मैं जरूर समझूँगी और आपके साथ **चलूँगी पाठशाला।**

17 अच्छा मित्र कौन?

हर्ष : मम्मी ! ओ मम्मी !! मैं विवेक के साथ पाठशाला जा रहा हूँ।

मम्मी : नहीं, बेटा ! पाठशाला मत जा, पापा गुस्सा होंगे। ज्ञान के साथ खेल ले।

हर्ष : वो भी विवेक के साथ पाठशाला जा रहा है।

मम्मी : करम, नरम, गरम के साथ खेल ले।

हर्ष : मम्मी कोई भी नहीं खेल रहा। आज देव नगरी के सारे बच्चे जैन नगर की पाठशाला जा रहे हैं। मैं अकेला क्या करूँगा, बोर हो जाऊँगा। जाने दो न मम्मी।

मम्मी : (मन में) अरे ये तो कुछ समझता नहीं। इसका मन कहीं और लगाना पड़ेगा। सही कहा है एक मछली सारे तालाब को गंदा कर देती है। ये विवेक, गरम और करण की तिकड़ी ने तो देवनगर का माहौल ही बिगाड़ कर रख दिया है। सबको पंडितजी बनाने चले हैं। हर्ष का मन लगाने के लिए घर में ही कुछ व्यवस्था करनी पड़ेगी। (कुछ सोचकर) (जोर से) हर्ष बेटा ! चल आज टी.वी. देख ले। पिक्चर की सी.डी. मंगा लेते हैं।

हर्ष : नहीं मम्मी ! मुझे पिक्चर नहीं देखनी है, मुझे खेलना है।

मम्मी : तो कम्प्युटर पर गेम खेल ले।

हर्ष : वही पुरानी सी.डी. खेलते - खेलते बोर हो गया मैं।

मम्मी : आज खेल ले बेटा। कल नयी ला देंगे। अच्छा ये तो बता वास्तव भी पाठशाला जाता है क्या?

हर्ष : नहीं, मम्मी ! वो नहीं जाता। उसके साथ किसी की दोस्ती नहीं है।

मम्मी : तो तूँ दोस्ती कर ले।

हर्ष : माँ ! वो बहुत गंदी - गंदी बातें करता है। गालियाँ देता है। उसके साथ कोई नहीं रहता है। मुझे भी अच्छा नहीं लगता।

मम्मी : अरे, बेटा ! तूँ तो समझदार है। तूँ ही उसे सिखा देना अच्छी-अच्छी बातें। उसका भी कोई दोस्त नहीं, तुझे भी खेलने को साथी मिल जाएगा।

हर्ष : (मन मारकर) ठीक है मम्मी ! जाता हूँ। (३ - ४ दिन बाद)

हर्ष : मम्मी ! मैं वास्तव के साथ पिक्चर जाऊँ।

मम्मी : (मन में) फालतू में ही १००-२०० रु. खर्च हो जाएँगे। (जोर से) आज नहीं कल चले जाना, पापा से पूँछ लेना, पैसे ले लेना।

हर्ष : मम्मी, पैसे की जरूरत नहीं हैं। वो तो वास्तव ने टिकट मंगा ली है।

मम्मी : जा, बेटा जा ! मुफ्त में जाने से कौन रोकता है। कितना अच्छा दोस्त मिला है तुझे।

हर्ष : अच्छा, मम्मी मैं जाता हूँ। (जाने के बाद)

मम्मी : चलो अच्छा हुआ। हर्ष को घूमने - फिरने को अच्छा साथी मिल गया। वरना विवेक के साथ तो ये मत खाओ, वो मत खाओ .... सारी पोंगापंथी बातें सीख जाता। अन्य सब बच्चों को तो

बिगाड़ ही दिया उसने। मेरे बेटे को ये सही दोस्त मिल गया।

दादी : बहु ! आजकल हर्ष नीचे खेलते दिखता नहीं है। जरा ध्यान रखना उसकी संगत न बिगड़ जाए। ये २-४ साल सम्हालने के हैं तुझे। एक बार यदि गलत राह पकड़ ली तो पीछे लौटना मुश्किल हो जाएगा और तुम्हारा जीवन नरक बन जाएगा।

बहु : माँ जी ! आप चिंता न करें। आजकल उसे बड़ा अच्छा दोस्त मिल गया है। वह हर्ष को घुमाता - फिराता है, पैसा भी वही खर्च करता है। हर्ष आजकल बहुत खुश रहने लगा है।

दादी : मुझे तो ये लक्षण अच्छे नहीं दिख रहे हैं। ये घूमना - फिरना, अकेले पिक्चर जाना सही नहीं है। आज घूमते - फिरते हैं, कल होटलबाजी शुरु हो जाएगी। पता भी नहीं चलेगा। आज वो पैसा खर्च करता है, कल ये स्वयं करने लगेगा। बाद में बात हाथ से निकल जाएगी, अभी से उसको नियंत्रण में रखो।

बहु : माँ जी ! आप भी क्या पुराने जमाने की बात लेकर बैठ गईं। मेरा सब ध्यान है, सब पर निगाह है मेरी। मैंने ही उसे वास्तव जैसे दोस्त के साथ रहने को कहा है। रोज रिपोर्ट लेती हूँ, वे क्या करते हैं।

दादी : मुझे तो आसार अच्छे नहीं लग रहे हैं। आजकल हर्ष का पढ़ने में भी मन नहीं लगता है।

बहु : माँ जी ! आप चिंता न करें। मैं सब सम्हाल लूँगी। अब मैं जा रही हूँ मुझे बहुत काम है।

दादी : इसका ये ओवर कॉन्फिडेन्स एक दिन इसे ले डूबेगा। (दोनों चली जाती हैं।)

18 छपते – छपते

पाश्चात्य संस्कृति को अपनाने में ही गर्व महसूस करने वाले, उसके अनुकरण में ही अपनी उन्नति समझने वाले, अपने को मॉडर्न कहलाने की चाह में कुछ पेरेन्ट्स अपने बच्चों को हर्ष और वास्तव के साथ दोस्ती कराना पसंद करते हैं।

"धार्मिक संस्कार ही सदाचार की आधार शिला है" - माननेवाले अपने बच्चों को विवेक, मरम, करण के साथ रहने को प्रेरित करते हैं।

हर्ष का साथ पाकर वास्तव का उत्साह बढ़ जाता है। वह घूमने - फिरने का प्रलोभन देकर कई बच्चों को अपने ग्रुप में शामिल कर लेता हैं। उधर विवेक, मरम और करण के समझाने पर कई बच्चे उसके साथ हो जाते हैं।

इस प्रकार धीरे-धीरे देवनगर के बच्चों में दो ग्रुप बन जाते हैं।

एक कहता है - **चलो सिनेमा,**

दूसरा कहता है - **चलो पाठशाला।**

दोनों ग्रुप के बच्चों के संस्कार कैसे होते हैं? आगे जाकर वे क्या करते हैं?

उनका भविष्य कैसा होता हैं?....... आदि बातें जानने के लिए पढ़िए -

चलो पाठशाला ; चलो सिनेमा भाग - २

परिचय

श्री अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन विद्वतपरिषद् द्वारा धार्मिक शिक्षण-प्रशिक्षण एवं बाल साहित्य के उत्कृष्ट लेखन हेतु पं. टोडरमल पुरस्कार से सम्मानित विद्वत्रत्न डॉ. शुद्धात्मप्रभा टडैया को सम्प्रति ८ मार्च २००८ को महिला दिवस के अवसर पर मुम्बई की महापौर के शुभ कर कमलों से सम्मानित किया गया।

आपका जन्म अशोकनगर(मध्यप्रदेश) में ३० जनवरी १९५८ को हुआ।

आपने बी . ए. (ऑनर्स) संस्कृत में स्वर्णपदक प्राप्त किया।

आपके द्वारा एम. ए. में लघुशोधनिबंध के रूप में लिखी गई आ. अमृतचंद्र और उनका पुरुषार्थसिध्युपाय नामक पुस्तक मात्र १९ वर्ष की अवस्था (२७ नवम्बर १९७७) में प्रकाशित हो गई।

आधुनिक बाल जैन साहित्य की प्रणेता आपने जैन सिद्धान्तों को सर्वप्रथम पहेलियों के रूप में प्रस्तुत कर जैन बाल साहित्य को नई दिशा प्रदान की है।

आपने 'आ. कुन्दकुन्द और उनके टीकाकार: एक समालोचनात्मक अध्ययन' विषय पर शोधकर राजस्थान विश्व विद्यालय, जयपुर से पीएच. डी की उपाधि प्राप्त की है। आपने अपने शोध ग्रन्थ में शोध समीकरणों को ध्यान में रखते हुए आ. कुन्दकुन्द के ग्रंथों और टीकाकारों का सर्वांगीण शोधपरक विवेचन सरल-सुबोध भाषा में प्रस्तुत किया है जो कि विद्वत्-जन, बुद्धिजीवी वर्ग के साथ-साथ जनसामान्य को भी अपनी ओर आकृष्ट करता है।

आपके द्वारा लिखी गई बाल पुस्तकों में पहेलियों, कविताओं और प्रश्नोत्तर शैली में लिखे गए पाठों के माध्यम से तत्त्वज्ञान एवं भेदविज्ञान कराया गया है। अद्यावधि जैन समाज में प्रचलित अन्य पाठ्यपुस्तकों से भिन्न शैली, रंगीन, चित्रमय प्रस्तुति एवं मूल तत्त्वज्ञान का समावेश - इन पुस्तकों की विशिष्ट पहचान है।

आपने विभिन्न आयुवर्ग को ध्यान में रखकर भिन्न-भिन्न शैलियों में अध्यात्म को जन - जन तक पहुंचाने का प्रयास किया है। गद्य-शैली, पद्य-शैली, चम्पू (गद्य-पद्य मिश्रित) शैली, पत्रशैली, डायरीशैली, छोटे-छोटे मंचन योग्य नाटक, बड़े-बड़े नाटक आदि साहित्य की विभिन्न विधायों के दर्शन आपकी कृतियों में होते हैं।

आपकी सभी कृतियाँ अध्यात्मरस से सराबोर और भेद-विज्ञान से ओतप्रोत हैं। सरलता आपकी कृतियों की सबसे बड़ी विशेषता है। कलरफुल चित्रों के माध्यम से रोचक प्रस्तुति और आकर्षक आधुनिक भाषा-शैली से सर्वप्रथम लिखी गई आपकी बाल पुस्तकें मील का पत्थर साबित हुईं हैं।

'सत्ता के सुख' नामक पुस्तक में जैनदर्शन के मूल छह द्रव्यों को पात्र बनाकर, आज के राजनीतिक परिवेश में ढालकर व्यंग्यात्मक रूप में प्रस्तुत कर आपने नीरस विषय को सरस, रोचक बना दिया है।

राम वनवास, कैकेई वरदान, नेमि-राजुल वैराग्य आदि पौराणिक सुप्रसिद्ध घटनाओं के विवरण में आपका मौलिक नया चिंतन दृष्टिगोचर होता है।

सम्प्रति वह मुंबई में रहती हैं। मुंबई में आप आध्यात्मिक प्रवचन करती हैं, तथा शिक्षण - प्रशिक्षण शिविरों में आपके द्वारा बालकों और युवाओं के लिए विशेष कक्षाओं का आयोजन किया जाता है, जिसमें सभी कम समय में अधिक से अधिक तत्त्वज्ञान प्राप्त करते हैं।

आपके द्वारा अभी तक छोटी - बड़ी २८ पुस्तकें लिखी गई हैं।

बाल साहित्य के क्षेत्र में उत्कृष्ट लेखन हेतु श्री अ.भा. दि. जैन विद्वत्परिषद द्वारा पं. टोडरमल पुरस्कार से सम्मानित विद्वत्रत्न डॉ. शुद्धात्मप्रभा टडैया को सम्प्रति ८ मार्च २००८ को महिला दिवस के अवसर पर मुम्बई की महापौर के शुभ कर कमलों से सम्मानित किया गया। प्रसिद्ध विद्वान डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल की आप सुयोग्य ज्येष्ठ पुत्री हैं। आपका जन्म अशोकनगर (म.प्र.) में ३० जनवरी १९५८ को हुआ।

आपने बी. ए. (ऑनर्स) संस्कृत में स्वर्णपदक प्राप्त किया।

आपके द्वारा एम. ए. में लघुशोधनिबंध के रूप में लिखी गई आ. अमृतचंद्र और उनका पुरुषार्थसिध्युपाय नामक पुस्तक मात्र १९ वर्ष की अवस्था (२७ नवम्बर १९७७) में प्रकाशित हो गई।

आपने 'आ. कुन्दकुन्द और उनके टीकाकार : एक समालोचनात्मक अध्ययन' विषय पर शोधकर राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर से पी. एच. डी की उपाधि प्राप्त की है। आपने अपने शोध ग्रन्थ में शोध समीकरणों को ध्यान में रखते हुए आ. कुन्दकुन्द के ग्रंथों और टीकाकारों का सर्वांगीण शोधपरक विवेचन सरल-सुबोध भाषा में प्रस्तुत किया है जो कि विद्वत्-जन और बुद्धिजीवी वर्ग के साथ-साथ जनसामान्य को भी अपनी ओर आकृष्ट करता है।

आधुनिक बाल जैन साहित्य की प्रणेता आपने जैन सिद्धान्तों को सर्वप्रथम पहेलियों के रूप में प्रस्तुत कर जैन बाल साहित्य को नई दिशा प्रदान की है।

आपके द्वारा लिखी गई बाल पुस्तकों में पहेलियों, कविताओं और प्रश्नोत्तर शैली में लिखे गए पाठों के माध्यम से तत्त्वज्ञान एवं भेदविज्ञान कराया गया है। अद्यावधि जैन समाज में प्रचलित अन्य पाठ्यपुस्तकों से भिन्न शैली, रंगीन, चित्रमय प्रस्तुति एवं मूल तत्त्वज्ञान का समावेश - इन पुस्तकों की विशिष्ट पहचान है।

आपने विभिन्न आयुवर्ग को ध्यान में रखकर भिन्न-भिन्न शैलियों में अध्यात्म को जन - जन तक पहुंचाने का प्रयास किया है। गद्य-शैली, पद्य-शैली, चम्पू (गद्य-पद्य मिश्रित) शैली, पत्रशैली, डायरीशैली, छोटे-छोटे मंचन योग्य नाटक, बड़े-बड़े नाटक आदि साहित्य की विभिन्न विधायों के दर्शन आपकी कृतियों में होते हैं।

आपकी सभी कृतियाँ अध्यात्मरस से सराबोर और भेद-विज्ञान से ओतप्रोत हैं। सरलता आपकी कृतियों की सबसे बड़ी विशेषता है। कलरफुल चित्रों के माध्यम से रोचक प्रस्तुति और आकर्षक आधुनिक भाषा-शैली में सर्वप्रथम लिखी गई आपकी बाल पुस्तकें मील का पत्थर साबित हुई हैं।

सम्प्रति वह अपने परिवार के साथ मुंबई में रहती हैं। जहाँ आपके पति का हीरे-जवाहरात एवं डायमंड ज्वैलरी का व्यवसाय है। मुंबई में आप आध्यात्मिक प्रवचन करती ही हैं, तथा शिक्षण - प्रशिक्षण शिविरों में आपके द्वारा बालकों और युवाओं के लिए विशेष कक्षाओं का आयोजन किया जाता है, जिसमें सभी कम समय में अधिक से अधिक तत्त्वज्ञान प्राप्त करते हैं।

आपके द्वारा अभी तक छोटी - बड़ी २८ पुस्तकें लिखी गई हैं, जिनकी सूची अंदर प्रकाशित की गई है।